Indian J. Soc. & Pol. 05(01):129-132:2018 **ISSN: 2348-0084(PRINT)**
UGC List No. 47956 **ISSN: 2455-2127(ONLINE)**

सर्वोदय एवं सामाजिक न्याय का गाँधीवादी परिप्रेक्ष्य

रणजीत कुमार[1a]
[a]एसोसिएट प्रोफेसर,राजनीति विज्ञान विभाग,जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार, भारत

ABSTRACT

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय, वसुधैव कुटुम्बकम् जैसी उदात्त भावनाओं एवं विचारों को अपने में समेटे सर्वोदय का दर्शन लोकमंगलकारी मानवतावादी अवधारणा है। उदारीकरण, निजीकरण एवं बाजारीकरण के वर्त्तमान दौर में जहाँ पूँजीवाद का नंगा खेल चल रहा है, शोषण का स्वरूप संस्थागत हो गया है, हर कोई आगे निकलने की आपाधापी में है, सर्वोदय एवं सामाजिक न्याय की संकल्पना ही दुनिया में इन्सानी मूल्य को प्रतिष्ठापित करने का एकमात्र जरिया नजर आता है। एक तरफ गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी एवं मुफलिसी का आलम है, दूसरी तरफ ऐशो–आराम की जिन्दगी जीने वाला एक बड़ा सुविधाभोगी वर्ग बन गया है जिसका देश के अधिकांश आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण है। फलतः समाज में तनाव, अशांति, हिंसा आदि का बोलबाला है। बदलाव के लिए हिंसक प्रतिरोध की भावना बढ़ती जा रही है, ऐसे में सर्वोदय एवं सामाजिक न्याय का गाँधीवादी दृष्टिकोण इन समस्याओं से निजात दिलाने का एक महत्वपूर्ण औजार साबित हो सकता है।

KEY WORDS: सर्वोदय, सामाजिक न्याय, गांधी, विनोवा भावे

वस्तुतः सर्वोदय, जिसका व्यवहारिक रूप सामाजिक न्याय है, 'जीओ और जीने दो' जैसी उदात्त विचारों पर आधारित दर्शन है जो दुनिया को शांति, सहअस्तित्व एवं इंसानियत का संदेश देता है। प्रेम और पारस्परिकता, सहयोग और सद्भावना सर्वोदय के मूलाधार हैं। सर्वोदय का अर्थ ही है सबकी भलाई, सबकी समृद्धि, सबका कल्याण। सांसारिक जीवन में इसका अर्थ है – रोटी, कपड़ा और आवास सबको सहज सुलभ हो अर्थात प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो। यहाँ यह काबिलेगौर है कि अनैतिक माध्यम से उपार्जित धन हमें पशुता की ओर ले जाता है। जब मनुष्य धनलोलुप हो जाता है तब वह किसी भी सीमा की परवाह नहीं करता और यही दोष समाज में असंतुलन पैदा करता है। मानव के मन और आत्मा की इस अपूर्णता को दूर करने के लिए सर्वोदय अचूक साधन है। सर्वोदय मानव को एक ऐसे रास्ते पर ले जाना चाहता है जो उसे वास्ताविक सामाजिक सुख तक पहुँचा सके। स्पष्ट है कि दुनिया में जब तक गरीबी, भूखमरी, मुफलिसी, शोषण, हिंसा, दमन मौजूद हैं तब तक सर्वोदय जैसा लोक–कल्याणकारी– मानवतावादी विचार का अस्तित्व बना रहेगा। इसीलिए गाँधीजी सामाजिक–आर्थिक असमानता एवं अन्याय को 'सर्वोदय' के माध्यम से हृदय परिवर्त्तन के जरिए दूर करना चाहते हैं।(धर्माधिकारी,1982 पृ08) यहाँ यह काबिलेगौर है कि सर्वोदय कोई नवीन सामाजिक–राजनीतिक दर्शन नहीं है बल्कि युग–युगांतर से चला आ रहा आम जनमानस की आकांक्षा का प्रतीक है। विशुद्ध लोक–कल्याणकारी राज्य (राम–राज्य) की स्थापना इसका राजनीतिक आधार है।

जहाँ तक सामाजिक न्याय का सवाल है तो इसका प्रथम और अंतिम उद्देश्य एक भेदभावविहीन, समतामूलक, समरस एवं सर्वसमावेशी समाज का निर्माण करना है। सामाजिक न्याय का अर्थ है– एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था का होना जिसमें बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति को समाज में समान अवसर एवं सुख–सुविधाएँ उपलब्ध हो। जाति, धर्म, लिंग, रंग, जन्म–स्थान, वंश, मूल, गरीबी आदि के आधार पर किसी को समाज में अपमानित न होना पड़े और न ही इन आधारों पर समाज में व्यक्तित्व के विकास के मार्ग में रूकावट आए। सामाजिक न्याय का प्रश्न सामाजिक समानता तथा सामाजिक अधिकारों से जुड़ा हुआ है। वस्तुतः सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय एक दूसरे के पूरक हैं इसलिए एक–दूसरे के बिना अधूरे हैं। (जैन,1988पृ0284) सामाजिक न्याय का संबंध मानवीय मूल्यों, आदर्शों, अधिकारों, गरिमा एवं औचित्य से है। सर्वोदय अन्त्योदय तथा सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः जैसे विचार सामाजिक न्याय के दर्शन के प्रेरणास्त्रोत हैं। सामाजिक न्याय का मूलमंत्र यह है कि संगठित सामाजिक जीवन से जो भी लाभ प्राप्त होते हैं वे इने–गिने लोगों के हाथों में सिमटकर न रह जाएँ बल्कि सर्वसाधारण को विशेषतः निर्बल और निर्धन वर्गों को उनमें समुचित हिस्सा मिले ताकि वे सुखी, सम्मानित और निश्चिन्त जीवन जी सकें। (गावा,2009पृ0304) वस्तुतः सामाजिक न्याय समाज के दबे–कुचले, उपेक्षित, बंचित, शोषित, पीड़ित एवं विकास के दौर में हाशिए पर रह गए लोगों को समाज एवं विकास की मुख्यधारा में लाने का सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन है, वंचित जमात को इंसाफ दिलाने का एक कारगर हथियार है।

गौरतलब है कि महात्मा गाँधी और उनके दो शिष्य विनोवा भावे एवं जयप्रकाश नारायण ही सर्वोदय के प्रधान उन्नायक हैं। भारत में वेद और उपनिषद् ने प्राचीन काल से ही मानव मात्र के कल्याण एवं समानता का उद्घोष एवं समर्थन किया है। गाँधीजी भी आर्थिक भेदभाव को दूर करने के लिए ट्रस्टीशिप

1: Corresponding Author

का विचार देते हैं जो धनी लोगों के हृदय परिवर्त्तन पर आधारित होगा। गाँधीजी का मानना था कि सर्वोदय का सार मानवतावाद है जो मानवतावादी होगा वह सर्वोदयी भी होगा। (दैनिक भाष्कर, 2अक्टू02015) वस्तुतः गाँधीजी समस्त मानवता का कल्याण चाहते थे। वे गीता के वास्तविक अर्थों में निष्काम कर्मयोगी थे। इसी से गुरू रवीन्द्रनाथ टैगोर उन्हें महात्मा कहते थे। देश के एक साधारण से साधारण आदमी में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत करने के कारण सुभाष चन्द्र बोस ने उन्हें 'राष्ट्रपिता' कहा। उन्हें देखकर एक साधारण व्यक्ति में भी विश्वास पैदा होता था कि कैसे छोटा–छोटा काम करके कोई व्यक्ति महान बनता है। इसलिए गाँधीजी महान हेाते हुए भी सामान्य थे और सामान्य होते हुए भी महान थे।

गाँधी जी के जीवन का प्रमुख लक्ष्य था भारत में सत्य और अहिंसा पर आधारित एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करना जिसमें संघर्ष के स्थान पर सहयोग, विषमता के स्थान पर समता और मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण न हो। उन्होंने इस सामाजिक व्यवस्था को सर्वोदय की संज्ञा दी थी। गाँधी के अवसान के पश्चात् उनके अग्रगण्य शिष्य आचार्य विनोबा भावे, आचार्य कृपलानी, जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, आचार्य राममूर्त्ति, कृष्णदत्त भट्ट आदि ने विशुद्ध रूप से अहिंसात्मक साधनों द्वारा सर्वोदय समाज की स्थापना की दिशा में एक व्यापक आंदोलन आरंभ किया। आर. पी. मसानी के अनुसार यह आंदोलन समाज के पुनरूत्थान का अद्वितीय मानव प्रयास है। (धर्माधिकारी,1982पृ08) इस आंदोलन में साधन और साध्य का अंतर नहीं है। इसमें हिंसा और दमन का प्रयोग नहीं है। यह सामाजिक क्रांति तथा बंधुत्व, समानता एवं स्वतंत्रता प्रदान करने का सर्वश्रेष्ठ तरीका है।

गाँधीजी के सर्वोदय की धारणा का आधार जॉन रस्किन की प्रसिद्ध पुस्तक अन्टू दिस लास्ट है कुछ मामलों में ये टॉलस्टाय के विचारों से भी प्रभावित हुए थे। लेकिन जितनी प्रखरता और व्यवस्थित रूप से गाँधी ने सर्वोदयी विचारों का विकास किया उतना अन्य किसी विचारक ने नहीं किया है। सर्वोदयी आदर्श में समाज या राज्य के सभी व्यक्तियों का विकास मुख्य लक्ष्य होता है अर्थात जाति, धर्म, रंग, लिंग, शक्ति, क्षमता, योग्यता आदि में किसी प्रकार का भेदभाव किए बगैर सबका हित। सर्वोदय समाज के सब लागों के उत्थान अथवा संपूर्ण समाज के सामूहिक कल्याण पर बल देता है। सर्वोदय गाँधी और उनके अनुयायियों के लिए सच्चा और सर्वोत्कृष्ट प्रकार का समाजवाद है। दादा धर्माधिकारी के शब्दों में ''सर्वोदय ऐसे वर्गविहीन, जातिविहीन एवं शोषणविहीन समाज की स्थापना करना चाहता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति एवं प्रत्येक समूह को अपने सर्वांगीण विकास के साधन और अवसर उपलब्ध होंगे। यह अहिंसा एवं सत्य द्वारा ही संभव है। सर्वोदय इसी का प्रतिपादन करता है।'' (वही पृ0167) आचार्य विनोबा भावे ने भी कहा है, ''सर्वोदय कुछ का, बहुतों का या अधिकतम् का उत्थान नहीं चाहता है। यह अधिकतम लोगों के अधिकतम सुख से संतुष्ट नहीं है। यह तो एक की और सबकी, ऊँचे की और नीचे की, सबल की और निर्बल की, बुद्धिमान की, और बुद्धिहीन की भलाई से संतुष्ट हो सकता है। (भावे,1982पृ056)

गाँधीजी देश के सभी लोगों का उत्थान और कल्याण चाहते थे चाहे वह मजदूर किसान हो या पूँजीपति, पूरे समाज के विकास से ही राष्ट्र का सम्यक विकास संभव है। जहाँ साम्यवाद ने केवल सर्वहारा वर्ग के विकास की बात की और पूँजीवाद ने पूँजीपतियों के हित की, वहीं सर्वोदय में सबके हित की बात की गई है। सर्वोदयी विचारधारा के अनुसार जहाँ निर्धन व्यक्ति आर्थिक रूप से दरिद्र है वहीं अमीर व्यक्ति नैतिक रूप से दरिद्र है। विनोबा जी के शब्दों में धनी लोग बहुत पहले से गिरे हुए हैं और निर्धन लोग कभी उठे ही नहीं। परिणाम यह है कि दोनों को ही उठाना है। (वही पृ059) दोनों प्रकार की दरिद्रता को दूर करके ही समाज या राष्ट्र का सही अर्थों में विकास किया जा सकता है। इसलिए गाँधीजी चाहते थे कि आगे बढ़े हुए लोग वंचित जमात के विकास में खाद का काम करे। ट्रस्टीशिप और दरिद्रनारायण की पूजा का आदर्श अपनाकर नैतिक और आर्थिक दोनों प्रकार की दरिद्रता को दूर किया जा सकता है। साम्यवाद और पूँजीवाद दोनों ने अपने तथाकथित विकास में भ्रष्टाचार और गैर–बराबरी को जन्म दिया है।

सर्वोदयी मान्यतानुसार मनुष्य की आत्मा पवित्र होती है। इस विचारधारा में स्वतंत्रता, समानता, न्याय और विश्वबन्धुत्व को अधिक महत्व दिया जाता है। लेकिन इसमें राज्य को मानवीय गुणों का विनाश करनेवाला बताया गया है। इसी कारण गाँधी राज्य का पूर्णतः विरोध करते थे और राज्य के बदले में स्वराज्य का समर्थन करते थे, जिससे मनुष्य का स्वयं अपने ऊपर आतंरिक नियंत्रण और शासन होगा। स्वराज्य जनता के नैतिक सम्प्रभुता पर आधारित होगा। सर्वोदय में शक्ति–राजनीति के स्थान पर सहयोग और सहमति की राजनीति होगी। दलगत लोकतंत्र में पद तथा शक्ति प्राप्त करने के लिए हिंसा, धन और कुटिलता का खुलकर प्रयोग किया जाता है जिससे लोकतांत्रिक राजनीति खोखली हो जाती है। इसी कारण सर्वोदय दलविहीन लोकतंत्र का समर्थन करता है जिसकी निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :–

(1) सर्वप्रथम निचले स्तर पर ग्राम सभाओं के सर्वोच्चतम सेवकों को अपनी पंचायत का एकमत से गठन कर लेना चाहिए। फिर ग्राम पंचायतें थाना पंचायत का और थाना पंचायतें जिला पंचायत का चुनाव करें। इसी प्रकार जिला पंचायतें राज्य की प्रशासन की रचना करें और राज्य फिर राष्ट्र के प्रशासन का चुनाव करें। इस प्रकार दलविहीन व्यवस्था तैयार होगी।

(2) सर्वोदयी दलीय राजनीति से सर्वथा पृथक रहेंगे। यदि किसी कारणवश उन्हें दलीय व्यवस्था में वोट देना पड़े तो वे किसी पार्टी

या व्यक्ति को ध्यान में न रखकर लोकहितकारी उम्मीदवार को अपना वोट देंगे।

(3) सर्वोदयी सार्वजनिक हित कार्यदल बनाकर समस्त दलों का आह्वान करें कि वे अपने मतभेदों को भुलाकर मिलजुलकर कार्य करें। भूदान इसी प्रकार का सर्वस्वीकार्य कार्यक्रम था।

(4) सर्वोदयी विधानसभाओं के निर्दलीकरण का प्रयास करेंगे। विभिन्न दलों से गए सदस्य अपनी पार्टी का ख्याल न रखकर देश और समाज का ध्यान रखेंगे और अपने देश का प्रतिनिधि मानेंगे।

गाँधीजी ने दलित, शोषित, वंचित और अल्पसख्यंकों के उत्थान के लिए साम्यवादियों की भाँति वर्ग संघर्ष पर जोर न देकर सामान्य कल्याण और सामंजस्य पर अधिक बल दिया है। उन्होंने सामाजिक विषमता को दूर करने के लिए ट्रस्टीशिप और दरिद्रनारायण की सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया। उनकी मान्यता थी कि इसी सोच के अभाव के कारण समाज में विषमता आई थी। धनवानों ने समाज की सम्पूर्ण सम्पति को अपने कब्जें में करने के लिए तमाम अनैतिक कार्य किए और समाज के अधिकांश लोगों को अपने सुख का साधन बनाया। गाँधीजी की स्पष्ट मान्यता थी कि समस्त प्राकृतिक सम्पदा ईश्वर का है, इसलिए उसपर सबका बराबर का अधिकार है। इस प्रकार के सर्वोदयी प्रयास से वर्ग संघर्ष समाप्त होकर एक सामंजस्यपूर्ण पारस्परिक सहयोगवाला समाज बनेगा और समाज में व्याप्त शोषण का अंत होगा।

सर्वोदय और सामाजिक न्याय मौलिक रूप से समान अवधारणायें हैं क्योंकि दोनों का उद्देश्य शोषित, पीड़ित, दलित, वंचित, पिछड़े और कमजोर वर्ग का उत्थान करना हैं। सामाजिक न्याय की अवधारणा का प्रार्दुभाव इस तथ्य से हुआ है कि उदार प्रजातंत्र अमीर और गरीब, साधन–सम्पन्न और साधनहीन के बीच की दूरी को पाटने में असमर्थ रहा है। हमारा लोकतांत्रिक संविधान समता, स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता जैसे मूल अधिकारों की गारंटी देता है किन्तु 70 वर्षों के अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि इन स्वतंत्रताओं का लाभ समाज के साधनहीनवर्ग को नहीं मिल पाया है। हमारा लोकतंत्र जो समाज के सभी वर्गों के व्यक्तियों को समान अधिकार देने का वादा करता है, निश्चित रूप से समाज में न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था सुनिश्चित करने में असफल रहा है। सामाजिक न्याय का विचार इसी न्यायसंगत सामाजिक व्यवस्था से संबंधित है जिससे समाज के प्रत्येक वर्ग एवं प्रत्येक व्यक्ति को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विशेषकर आर्थिक क्षेत्र में न्यायपूर्ण अधिकार देने की बात कही गई है।

सामाजिक न्याय का विचार एक क्रांतिकारी विचार है। यह समाज में ऐसी व्यवस्था की स्थापना का मानंदड है जिसमें समाज का प्रत्येक व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समान रूप से भागीदारी निभा सके और आर्थिक विकास के लाभों में समान रूप से हिस्सा प्राप्त कर सके। सामाजिक न्याय वास्तव में न्याय की तलाश है। यह कानून को सामाजिक परिवर्तन के वाहक के रूप में प्रयोग की मांग करता है। सामाजिक न्याय का अर्थ है समाज के उस बड़े भाग के लिए न्याय जो साधनहीन, सुविधाहीन और विशेषाधिकार रहित हैं। यह ऐसा न्याय है जो न केवल रंग, लिंग, शक्ति, हैसियत और धन की असमानता को दूर करता है बल्कि समाज के कमजोर तबके का पक्षपोषण करता है। यह उनके लिए सामाजिक, भौतिक और राजनीतिक संसाधनों के समान वितरण तथा विधि के शासन के अर्थपूर्ण स्थापना की मांग करता है। सामाजिक न्याय इस प्रकार, सभी प्रकार के भेद–भाव और असमानताओं का अंत कर सभी नागरिकों के सामाजिक और आर्थिक क्रियाओं में समान अवसर प्रदान करने के उद्देश्य को अपने अंतर्गत समाहित करता है।

सामाजिक न्याय को मात्र सामाजिक सुरक्षा समझना गलत होगा। यह सामाजिक सुरक्षा से अधिक बड़े अर्थ का सूचक है। यह वंचितों और दलितों तथा कमजोर और पिछड़ों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पर जोर देता है। सामाजिक न्याय मूल रूप से समानता की धारणा है। यह एक समतावादी विचार है जिसमें समानता आधारशिला का काम करती है। समानता और सामाजिक न्याय के विश्लेषण में आनुपातिक समानता का सिद्धांत व्यवहारिक है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति समाज में एक समान मूल्यों का संपादन नहीं करता। अतः व्यक्तियों द्वारा समाज में किए जा रहे कार्यों के मूल्य के अनुपात में ही वितरण सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

सामाजिक न्याय में आनुपातिक समानता के साथ–साथ संरचनात्मक पहलू भी शामिल है। समाज के कमजोर और पिछड़ा वर्ग अपनी सीमित क्षमताओं के कारण समृद्ध और सुविधासंपन्न वर्ग के साथ प्रतियोगिता करने में अक्षम होता है। कमजोर एवं पिछड़े वर्ग तथा सम्पन्न वर्ग को एक सक्षम प्रतियोगी बनाने के लिए आवश्यक है कि या तो सम्पन्न वर्ग की क्षमता में कटौती की जाए अथवा कमजोर वर्ग को संरक्षण देकर उन्हें सम्पन्न वर्ग के साथ प्रतियोगिता के लिए सक्षम बनाया जाय। इस प्रकार सामाजिक न्याय की परिधि में पिछड़े एवं कमजोर वर्ग के उत्थान के लिए संरचनात्मक उपायों को अपनाना समानता के सिद्धांत का हनन नहीं होता, बल्कि असमान प्रतियोगियों में समान प्रतियोगिता के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना होता है। इस परिप्रेक्ष्य में समानता और सामाजिक न्याय परस्पर प्रतिस्पर्धी न होकर पूरक बन जाते हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी गाँधीजी के सर्वोदयी विचारों का व्यवहारिक प्रयोग कर सामाजिक न्याय की स्थापना की जा सकती हैं। गाँधी जी सामाजिक न्याय के प्रखर प्रवक्ता थे। पिछड़े, कमजोरों, अछूतों और दलितों का उत्थान उनकी सर्वोच्च प्राथमिकता थी। उनका सर्वोदयी समाज (अहिंसक समाज) सामाजिक न्याय के आदर्शों पर ही आधारित था। उन्हीं के शब्दों में 'इस समाज में आखिरी व्यक्ति पहले व्यक्ति के बराबर होगा। दूसरे शब्दों में कोई व्यक्ति न तो पहला होगा और न आखिरी।

इस समाज में प्रत्येक व्यक्ति के लिए पूरा और बराबर का स्थान होगा।' (भावे पृ022)

समाज में व्याप्त छुआ–छूत की प्रथा से गाँधी जी को स्वाभाविक घृणा थी। वे इसे सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता के मार्ग में दुःसाध्य अवरोध मानते थे। इसलिए इस बुराई को समूल नष्ट करना चाहते थे। उन्होंने अछूतों को हिन्दू समाज का अभिन्न अंग बताया और कहा कि उनको समाज में निम्नतम स्थान देना, उन्हें निकृष्टतम कार्य करने के लिए बाध्य करना, उन्हें मंदिरों में प्रवेश न देना, उन्हें सार्वजनिक स्थान का प्रयोग न करने देना, उन्हें धर्मग्रंथों का अध्ययन करने से रोकना आदि उनके प्रति अवर्णनीय अन्याय है तथा उनको अकारण मानवाधिकारों से वंचित करना है। गाँधी जी के ह्रदय में अछूतों के लिए कितना प्रेम और सम्मान था उसका अनुमान उनके इन शब्दों से लगाया जा सकता है, ''मैं फिर जन्म नही लेना चाहता हूँ, पर यदि मुझे जन्म लेना पड़े तो मैं अछूत के रूप में जन्म लेना चाहूँगा ताकि मैं अछूतों के कष्टों, क्लेशों तथा अभावों में भाग ले सकूँ। अतः मेरी प्रार्थना है कि यदि मुझे फिर जन्म लेना पड़े तो मुझे ब्राह्मण, क्षत्रीय या शुद्र के रूप नहीं वरन् अतिशुद्र के रूप में जन्म मिले।''(यंग इण्डिया 4 मई 1921) अछूतों के प्रति सम्मान के कारण ही उन्होंने उन्हें 'हरिजन' शब्द से सम्बोधन करना शुरू किया।

सर्वोदय के माध्यम से सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए गाँधीजी ने सत्याग्रह के तकनीक के प्रयोग पर बल दिया। जब प्रेम और सद्भाव तथा सरंक्षण एवं ह्रदय परिवर्तन से सामाजिक न्याय का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता तो ऐसी परिस्थिति में उन्होंने सत्याग्रह के हथियार को अपनाने पर जोर दिया। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि सामाजिक–आर्थिक न्याय को प्राप्त करने, औद्योगिक संघर्षों में तथा साम्प्रदायिक और अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराईयों के विरूद्ध संघर्ष करने में भी सत्याग्रह के तकनीक को काम में लाया जा सकता है। रौलट एक्ट के विरूद्ध एक राष्ट्रव्यापी संघर्ष में इसका उपयोग करने से पहले वे इसे अहमदाबाद में मिल मजदूरों के झगड़े को सुलझाने और बारदोली तथा कुछ अन्य स्थानों पर किसानों की शिकायतों को दूर करने के लिए प्रयोग कर चुके थे। बाइकोम मंदिर मार्ग का सत्याग्रह सामाजिक न्याय प्राप्ति का ज्वलंत उदाहरण है। यह सत्याग्रह 1924–25 में लगभग 16 महीने तक उस आदेश के विरूद्ध था जिसके अनुसार मंदिर के पास से निकलने वाले मार्ग का प्रयोग अछूतों के लिए निषिद्ध था। आंदोलन का परिणाम यह निकला कि यह मार्ग सबों के लिए खोल दिया गया। इसकी प्रतिक्रिया देश के अन्य भागों में भी हुई और बहुत से स्थानों में जहाँ मंदिरों में प्रवेश निषिद्ध था अब उनके प्रवेश पर से प्रतिबंध हटा ली गई।

आज के राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक परिदृश्य में विशेषकर वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण से उपजी, उपभोक्तावादी संस्कृति में जब व्यक्ति की पहचान एवं उसकी अस्मिता पर गहरा संकट छाया हुआ है, गाँधीजी के सर्वोदय विचारधारा (भावना) के अनुसार कार्य करना आवश्यकता प्रतीत हो रहा है। आज भी दलित अपने उत्थान के लिए तरस रहे हैं। उनके प्रति अभी भी भेद–भावपूर्ण व्यवहार किया जा रहा है। वे आज भी शोषण और अत्याचार के शिकार है। उनकी आत्मा, उनकी गरिमा और उनके आत्म–सम्मान पर आघात हो रहा है, जबकि राज्य, उसके कानून, उसके अन्य मशीनरी संवेदनशून्य बनकर मौन बैठा है। हम जिस तरह का समाज चाहते हैं उसका सृजन किसी भी तरह की हिंसा से सम्भव नहीं है। हिंसा से टकराव और विध्वंस का ही सृजन होता है। यह कल्पना करना भी विवेकहीनता ही है कि टकराव में प्रगतिशील शक्तियों की ही जीत होगी। जर्मनी में हिटलर ने कम्युनिस्ट और सोशल डेमोक्रेट दोनों का ही सफाया कर दिया था। ''भारत में हिंसा का कोई भी आह्वान खासतौर पर इसलिए खतरनाक है, क्योंकि उसका तो सहज रूप ही विध्वंसक है। हमारे यहाँ यों भी अनेक जोखिम भरी और विभेदक प्रवृतियाँ मौजूद हैं जिनका हमें दमन और शमन करना है। नक्सलियों का हिंसक संघर्ष हमें विनाश की ओर ले जा रहा है।''(नैयर 21 मार्च 2014) किसी क्षेत्र का पिछड़ापन और वहाँ के निवासियों की विपन्नता ही नक्सलियों को पनपाने वाला आधार है। निःसंदेह बंदूक का भय लोगों को उनका समर्थन करने को बाध्य करता है, फिर भी यह विचारधारा अनेक को उनके साथ जोड़ती है क्योंकि यह भूमिहीनों और निर्धन इन्सानो के लिए बेहतर जीवन की आशा जगाती है। दरअसल गलत राह से कभी सही परिणाम नहीं मिल पाते और यही है वह सार जिसकी सीख नेल्सन मंडेला, डेसमड टुटु और लेक वालेसा जैसे गाँधीवादी देते रहे है।

सन्दर्भ

धर्माधिकारी, दादा (1982) *सर्वोदय, खंड –'1,* वाराणसी, सर्वसेवा संघ प्रकाशन

जैन, एम. पी. (1988) *राजनीति के सिद्धांत,* दिल्ली, आथर्स गिल्ड पब्लिकेशन

गावा, ओ. पी. (2009) *राजनीति सिद्धांत की रूपरेखा,* नोएडा, मयूर पेपर बैक्स

दैनिक भास्कर, पटना, 2 अक्टूबर, 2015

भावे, विनोबा (1982), *सर्वोदय : सिद्धांत एवं कार्यक्रम,* वाराणसी,सर्व सेवा संघ प्रकाशन

कृष्णाअययर वी. आर. (1987) *सोशल जस्टिस, सनसेट ऑर डाउन,*

यंग इंडिया, 4 मई, 1921,

इंडिया टुडे, नई दिल्ली, 10 अगस्त, 2016.

नैयर,कुलदीप (2007) गाँधीवाद बनाम नक्सलवाद, *दैनिक जागरण* (मुजफ्फरपुर) 21 मार्च, 2007